शोध संचयन
SHODH SANCHAYAN
ISSN 2249-9180 (Online)
ISSN 0975-1254 (Print)
RNI No.: DELBIL/2010/31292

Bilingual journal of Humanities & Social Sciences

Half Yearly

Vol. 1, Issue 2, 15 July, 2010

समीक्षात्मक शोध : प्रतिमान तथा प्रक्रिया

प्रो० सूर्यप्रसाद दीक्षित

पूर्व विभागाध्यक्ष, हिन्दी विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ

www.shodh.net

समीक्षात्मक शोध : प्रतिमान तथा प्रक्रिया

प्रो० सूर्यप्रसाद दीक्षित

साहित्यगत शोध का रूढ़ प्रयोजन है तथ्य का परिष्कार और तत्व का प्रतिस्थापन। यह स्वयं में एक सचेतन प्रक्रिया है, जिसके द्वारा नये-नये निष्कर्षों की खोज होती है और नयी-नयी मान्यतायें निरूपित की जाती हैं। शोध की प्रक्रिया के अन्तर्गत शोधार्थी तथ्य से तत्त्व तक संचरण करता है और इस प्रकार सत्य का संधान होता है। मात्र तथ्य को ही स्वयं में अनुसंधान नहीं कहा जा सकता, क्योंकि वह तो संशोधनकार्य का उपकरण मात्र है अथा साध्य का साधन भर है। तथ्यों के संकलन द्वारा अनुसंधाता को एक सहज माध्यम मिल जाता है, जिसका आश्रय लेकर वह तत्त्व की प्रतिष्ठा करता है। तथ्यों का संचय सर्वथा महत्वपूर्ण है, तथापि यह संकलन-कार्य प्रायः आध्यवसायिक अर्थात श्रमसाध्य कार्य है। शोध कार्य में जब तक तथ्य विषयक विश्लेषण का समावेश नहीं होता, तब तक अनुसंधाता के बौद्धिक प्रकर्ष का प्रमाण नहीं मिलता और इस प्रकार अन्वेषण अपूर्ण रह जाता है। प्रतिपाद्य विषय के मूल्यांकन हेतु तथ्य-संचय व तत्त्वोद्घाटन दोनों अन्योन्याश्रित हैं। तथ्य यदि प्राथमिक उपचार है तो तत्त्व उपलब्धि सूचक अन्तिम परिणति। इनके समवेत स्वरूप को हम समीक्षापरक शोध कार्य की कोटि में रख सकते हैं।

समीक्षापरक शोध का क्षेत्र बड़ा विशद है, साहित्य में जहाँ भी विश्लेषण हैं, जहाँ भी कृतित्व की उपलब्धियों का मूल्यांकन किया गया है, वह समस्त कार्य इस कोटि में ग्राह्य है। इस शीषर्क के अनेक रूपान्तर और पर्याय प्राप्त होते हैं।, यथा -मूल्यांकन, विश्लेषण, विवेचन, आकलन, अनुशीलन, परिशीलन, एक अध्ययन आदि। उपर्युक्त अभिधानों में परस्पर न्यूनाधिक अन्तर भी हैं, किन्तु स्थूलतः वे अभिन्नार्थी हैं। समीक्षात्मक शोध, शोधार्थी की वैचारिक शक्ति और निर्णयात्मक धारणा का अधिकरण है। इसके अन्तर्गत प्रतिपाद्य विषय का सम्यक बोध प्रस्तुत किया जाता है और महत्त्वपूर्ण अभिनव स्थापनाएँ की जाती हैं। समीक्षा का प्रयास भी बड़ा वैविध्यपूर्ण होता है। यह व्यापक से व्यापक और सूक्ष्म से सूक्ष्म स्तरों पर घटित हो सकता है। हम चाहें तो किसी काव्य प्रवृत्ति और युग विशेष के समस्त कृतित्व की समीक्षा कर सकते हैं या किसी साहित्यिक विशेष और कृति विशेष का मूल्य आँक सकते हैं। उदाहरणार्थ आधुनिक काव्य एवं उसके प्रमुख स्तम्भों का भी सर्वांगीण मूल्यांकन किया जा सकता है और इसके अंगभूत विशिष्ट कृतिकारों-प्रसाद, निराला, पंत, महादेवी आदि के समस्त कृतित्व का भी मूल्यांकन हो सकता है। यहाँ तक कि इन कवियों की कोई एक कृति और उसके किसी एक पक्ष के अतिसामान्य पहलू का मूल्य आंका जा सकता है - जैसे ''कामायनी के पारिभाषिक शब्दों का सांस्कृतिक मूल्यांकन'' समीक्षा के आधार भी एक नहीं, अनेक हो सकते हैं। प्रतिपाद्य विषय को हम जिस कसौटी पर चाहें परख सकते हैं, यथा-कलात्मक, शास्त्रीय, साहित्यिक, सांस्कृतिक, दार्शनिक, सैद्धान्तिक आदि। तात्पर्य यह है कि इस शोध की इयत्ता बड़ी विस्तृत है और सूक्ष्म भी। इस दिशा में अब तक सर्वाधिक कार्य हुआ है और भविष्य में तो अभी और सम्भावनाएँ हैं।

समीक्षात्मक शोध के प्रतिमान यद्यपि बहुत सुगढ़ और स्पष्ट नहीं (क्योंकि यह पद्धति प्रायः रुचि-वैचित्र्य और वैयक्तिक धारणाओं पर निर्भर है) तथापि इसका एक बहुप्रयुक्त स्वरूप अवश्य है। विषय चाहे पूर्व परिचित हो या नितांत अपरिचित, उसमें प्रवेश करते ही मूल्यांकन का प्रयास आरम्भ हो जाता है। शोधार्थी के समक्ष कुछ आधारभूत सामग्री (अर्थात् कृति) होती है। उनके गम्भीर पारायण और मनन से यह कार्य आरम्भ होता है। घोर अध्यवसाय इस कोटि के अनुसंधान के लिए अत्यावश्यक है। यदि विवेच्यकृति का उत्कृष्ट अंश विवेचक के मनोमस्तिष्क में उपस्थिति-सा हो जाए और पाठ-पठन द्वारा यथासंभव कंठस्थ इन अंशों में विचारक आचूड़मग्न हो जाय, तो उसे अपने मूल्यांकन कार्य में अपेक्षाकृत अधिक सफलता प्राप्त हो सकती है। मूल्य आँकने के लिए हर प्रकार की नाप-जोख या परख उपादेय होती है। आधार ग्रन्थों के सांगोपांग अनुशीलन से समस्त कृतित्व हमारी बौद्धिक तुला पर उपस्थित हो जाता है और तब हमारी धारणा-शक्ति द्वारा उसे चिंतन की तहों में उतार सकते हैं। यह प्रक्रिया स्वंय में बड़ी सहज है। धारण करने के लिए किसी बौद्धिक व्यायाम की

शोध संचयन
SHODH SANCHAYAN
ISSN 2249-9180 (Online)
ISSN 0975-1254 (Print)
RNI No.: DELBIL/2010/31292

Bilingual journal of Humanities & Social Sciences

Half Yearly

Vol. 1, Issue 2, 15 July, 2010

समीक्षात्मक शोध : प्रतिमान तथा प्रक्रिया

प्रो० सूर्यप्रसाद दीक्षित

पूर्व विभागाध्यक्ष, हिन्दी विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ

www.shodh.net

आवश्यकता नहीं हैं। हमारी भावयित्री प्रतिभा आलोच्य विषय की कुछ एक आवृतियों के बाद भावुक स्थलों का मर्म ग्रहण कर लेती है। चिंतन के क्षणों में इन्हीं स्थलों पर बारम्बार विचार करने को हम बाध्य होते हैं। इन्हीं बिखरे-विचार सूत्रों के साँगोपांग आकलन द्वारा ही हमारा समीक्षा-कार्य शोध के स्तर पर पहुँच जाता है। कृतित्व की प्रेषणीयता समीक्षा-कार्य के लिए बड़ी सहायक सिद्ध होती है। जिस कृति में प्रेषणीयता नहीं होती, उसके अभाव ही हमें अभिमुख कर लेते हैं और हम समीक्षा करते हुए उन अभावों की परिगणना के लिए तत्पर हो जाते हैं।

शोध-कार्य हेतु संयम और संतुलन की आवश्यकता होती है। जब हम निरुद्विग्न चित्त और रागद्वेष विहीन होकर किसी विषय पर स्वचिंतन करते हैं। तभी हमारे अभिमत प्रमाणित और

शोध संचयन
SHODH SANCHAYAN